शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621

Year -1
Vol -7
May
2024

जब्त रूस भ्रमण के टेगौर अक्षरों का रहस्य

डॉ. स्वतंत्र कुमार सोनी
प्राचार्य
राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त कॉलेज ऑफ एजूकेशन, चिरगांव

(11 सितम्बर 1930, स्थान रूस, मास्को, सेटपीटर्सबर्ग, कीव)

गुरुदेव सच्चे अर्थों में पृथ्वी के कवि थे। उनकी रुचि मानव मात्र के जीवन में थी। उन्होंने समस्त विश्व प्रकृति और विश्व मानव की छवियों का आजीवन ध्यान और अनुध्यान किया, उनको स्वर दिया और साथ ही पूर्व और पश्चिम के अनेक देशों की यात्राएँ ही नहीं की, उनके वृत्तांत लिखकर उन्हें अविस्मरणीय, बल्कि पुनः पुनः स्मरणीय भी बना दिया। इन यात्राओं में उनकी रूस-यात्रा अद्वितीय है और उनकी यात्रा संबंधी पत्रों मेंज़ब्त रूस की चिट्ठी (राशियार चिठि) अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

1892-93 में ही उन्होंने समाजवाद, कैथोलिक समाजवाद, श्रमिक स्त्रियों और रोजगार की तलाश जैसे विषयों पर जो कुछ लिखा उससे श्रमजीवी जनसाधारण और समाजवाद के प्रति उनकी सहानुभूति साफजाहिर है लेकिन रूस की नवम्बर क्रांति के आठ ही महीनों बाद मॉडर्न रिव्यू (जुलाई 1918) में उनका जो लेख 'ऐट द क्रासरोड्स' शीर्षक से छपा उसमें उन्होंने सीमितसूचनाओं के बावजूद क्रांति के भीतर धन की अनैतिक शक्ति के विरुद्ध 'मनुष्य की अदम्य आत्मा की अभिव्यक्ति' के दर्शन किए और उसकी विफलता की स्थिति में भी 'नये युग के सूर्योदय' की भविष्यवाणी की।

We know very little of the history of the present revolution in Rusia, and with the scanty materials in our hands we cannot be certain if she, in her tribulations, is giving expression to man's indomitable soul against prosperity built upon moral nihilism this tremendousness of her struggle and hopelessness of her tangles do not in themselves, prove that she has gone

E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1 Vol -7 May 2024

astrayIt is not unlikely that as a nation, she will fail, but if she fails, with the flag of true ideals in her hands, then her failure will fade like the morning star, only to usher in the sunrise of the new age.

इस दुर्लभ लेख को खोज निकालने के लिए हीरेन मुखर्जी ने चिन्मोहन सेहलानवीस की समुचित प्रशंसा की है।

महाकवि के मन में क्रांति के बाद सोवियत रूस को अपनी आँखों से देखने की कैसी तीव्र उत्कंठा रही होगी, इसकी कल्पना की जा सकती है। 1926 में अपनी यूरोप यात्रा के दौरान जब वे वियना में थे, उन्हें रूस आने का निमंत्रण मिला लेकिन अस्वस्थता के कारण उनका जाना नहीं हुआ। 1929 में जब कनाडा से वापस लौटते समय जापान में ठहरे हुए थे तो उन्हें कोरिया से निमंत्रण आया। वे तैयार हो गए और सोचा कि कोरिया से लगे हाथ ट्रांस-साइबेरियन रेलमार्ग के जरिये रूस चले जाएँगे और वहाँ अपनी आँखों देखेंगे कि आखिर सोवियत सरकार ने जन साधारण में शिक्षा का कैसा प्रसार किया है। लेकिन उस बार भी जापानी डॉक्टर ने स्वास्थ्य के कारण उन्हें यात्रा करने से मना कर दिया और पूर्ण विश्राम की सलाह दी। रूस जाना फिर नहीं हो पाया। 1930 में भी जब वे जेनेवा में थे, कई अंग्रेज मित्रों ने उन्हें भग्न स्वास्थ्य के कारण रूस जाने से रोकने की कोशिश की, लेकिन सफल नहीं हुए। उन्होंने 11 सितम्बर, 1930 से 25 सितम्बर, 1930 तक रूस की यात्रा की। इस यात्रा में उनके साथ थे- अमिय चक्रवर्ती, अरियम विलियम्स (आर्यनायकम्) डॉ. हैरी टिम्बर्स, मिस मॉरगोट आइन्सटाइन और सौम्येन्द्र नाथ ठाकुर।

वे 11 सितंबर को मास्को पहुँचे, ग्रेन्ड होटल में ठहरे, विभिन्न संस्थानों में घूम-घूम कर उन्होंने कृषि, शिक्षा, कला संस्कृति के क्षेत्र में होने वाले नए-नए प्रयोगों को अपनी आँखों देखा, अधिकारियों और कार्यकर्ताओं से लेकर सुदूरवर्ती प्रदेशों के गरीब किसानों, युवकों और बच्चों तक से बातचीत की, सोवियत सरकार द्वारा प्रकाशित सूचना सामग्री का अध्ययन किया और उनके मन पर उस सबकी जो छाप पड़ी, उस सबके बारे में जो उनकी धारणा बनी उस सबसे अपने देश की परिस्थिति की तुलना करते हुए उनके मन में जो विचार आए वह

सब अपने स्वजनों और आत्मीयजनों के नाम पत्रों में विस्तार से लिखते गए और भारत लौटकर उन्होंने उन सबको संकलित करके शांति निकेतन से वैशाख 1338 (1931) में राशियार चिठि नाम से प्रकाशित किया। इस यात्रा में उन्होंने रूस में जो कुछ देखा था उससे इतने अभिभूत थे कि न केवल रूस में रहते समय उन्होंने मित्रों को लंबे-लंबे पत्र लिखे वरन् 25 सितम्बर को रूस से विदा होने के बाद भी बर्लिन से, समुद्र यात्रा के दौरान ब्रेमेन जहाज से और लैन्स डाउन से अक्टूबर के अंत तक यह सिलसिला जारी रखा।

'ज़ब्त रूस की चिठि में उपसंहार सहित कुल 15 पत्र हैं जिनमें रथीन्द्रनाथ ठाकुर, आशा अधिकारी, नन्दलाल वसु, कालीमोहन घोष और सुधीन्द्रनाथ दत्त को एक-एक निर्मल कुमारी महलानवीस, प्रशांत चंद्र महलानवीस और रामानंद चट्टोपाध्याय को दो-दो और सुरेन्द्रनाथ कर को सबसे अधिक चार पत्र लिखे हैं। कहना न होगा कि पुस्तक "कल्याणीय श्रीमान् सुरेन्द्रनाथ कर" को ही आशीर्वाद के रूप में समर्पित है ये पत्र पहले बंगला पत्रिका "प्रवासी" में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुए, फिर राशियार चिट्ठी पुस्तक प्रकाशित हुई। तब भी अंग्रेजी सरकार की नजर इस पर न पड़ी लेकिन 1934 के सितंबर महीने में जब मॉडर्न रिव्यू में सोवियत नीति या उपसंहार शीर्षक पत्र का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ तब अधिकारियों के कान खड़े हुए और अन्य पत्रों के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करने पर पाबंदी लगा दी गई। अंग्रेजों ने उपसंहार से ही अनुमान कर लिया कि भारतीय जन-साधारण की गरीबी, अशिक्षा और नारकीय स्थिति के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार अंग्रेजी राज के प्रति घनघोर घृणा और प्रतिकार और सोवियत समाजवादी व्यवस्था के प्रति मुक्तकंठ प्रशंसा और समर्थन का भाव ही अन्य पत्रों में विस्तार से व्यक्त हुआ होगा इसीलिए उनके प्रकाशन पर रोक लगाने का फैसला करने में देर न की। हिंदी पाठकों के आगे राशियार चिट्ठी के सभी पत्रों को सामने रखकर चर्चा करना काफी रोचक और शिक्षाप्रद होगा।

गुरुदेव मॉस्को में जिस ग्रैण्ड होटल में ठहरे थे, वह एक बड़ी हवेली थी लेकिन उसकी अवस्था अत्यन्त दरिद्र थी मानो किसी अमीर का लड़का दिवालिया हो गया हो। 19 सितम्बर को उन्होंने निर्मल कुमारी महलानवीस को लिखा, "समूचे शहर की दशा ऐसी ही है जैसे फटे

कुरते में सोने के बटन, गरीबी में नवाबी रौब का चेहरा, ढाका की धोती रफू की हुई।... आहार व्यवहार में ऐसी सर्वव्यापी निर्धनता यूरोप में कहीं नहीं दिखाई देती, वहाँ गरीबी आड़ में है, सामने धन का पूँजीभूत रूप सबसे बड़ा दिखायी देता है। लेकिन आड़ में, नेपथ्य में सब अस्त-व्यस्त, गंदा, अस्वास्थ्य परायण, दुःख-दुर्दशा दुष्कर्म का निविड़ अंधकार, वहाँ जहाँ ठहरने को जगह मिलती है उसकी खिड़की से सब कुछ सुभद्र शोभन सुपुष्ट दिखायी देता है। सोवियत रूस में धनी गरीब का भेद नहीं है। इसलिए धन का चेहरा लुप्त हो गया है। यहाँ दैन्य की भी कुश्रीता (भद्दगी) नहीं है, अकिंचनता है। यहाँ सर्वत्र जनसाधरण है। मॉस्को के रास्ते पर तमाम लोग चलते हैं, कोई फिट-फाट नहीं है, देखते ही समझा जा सकता है कि अवकाश-योगियों का दल बिलकुल अन्तरध्यान हो गया है, सबको अपने हाथों काम-काज करके गुजर करनी होती है। बाबूगीरी की पॉलिश कहीं नहीं।

25 सितंबर को प्रशांत चंद्र महलानवीस के नाम लिखे अपने पत्र में गुरुदेव ने बताया है कि जब रूस से निमंत्रण आया, वोल्शेविकों के बारे में उनकी कोई स्पष्ट धारणा नहीं थी। उनके बारे में उल्टी पुल्टी बातें सुन रखी थीं, मन में खटका था, कुछ ने खान-पान, रहने-सहने की असुविधा का भय दिखाया। 70 वर्ष की उम्र में भग्न स्वास्थ्य लेकर रूस की यात्रा करना उनके लिए दुस्साहसिकता ही थी, फिर भी उन्होंने यह दुस्साहस किया क्योंकि के ‘‘पृथ्वी पर जहाँ सबसे बड़े ऐतिहासिक यज्ञ का अनुष्ठान हो रहा है वहाँ निमंत्रण पाकर भी न जाना मेरे लिए अक्षम्य अपराध होता....‘‘वहाँ मैं नहीं जाऊँगा तो कौन जाएगा।‘‘ अपनी जीवन भर की तमाम यात्राओं में रूस यात्रा को सर्वोच्च स्थान देते हुए उन्होंने पत्र के आरंभ में ही लिखा, ‘‘अंततः मैं रूस आ गया, न आता तो इस जन्म की तीर्थयात्रा अधूरी रह जाती‘‘ (ना एले ए जन्मेर तीर्थ दर्शन अत्यंत असमाप्त थाकतो)।

गुरुदेव ने रूस देखा और मन ही मन अनुभव किया-अभी तो क्रान्ति हुए केवल 13 वर्ष बीते हैं, शासन में आते ही इन्हें देश के भीतर और बाहर तमाम विरोधी शक्तियों से लोहालेना पड़ा है, कंधे पर पहले ही टूटीफूटी राष्ट्रीय व्यवस्था का चोझ है, ऊपर से विरोधी शक्तियों को इंग्लैण्ड और अमरीका की खुली और छिपी सहायता मिल रही है, इनके आर्थिक

संबल कम हैं, विदेशीमहाजनों की गद्दियों पर इनकी साख नहीं है, कल-कारखाना पर्याप्त न होने से आर्थिक उत्पादन कमजोर हैं, अपनी खोराकी बेचकर ही अपना उद्योगपर्व चलाना पड़ रहा है, उधर राष्ट्र व्यवस्था के सबसे अनुत्पादक विभाग-सैनिक विभाग को भी पूरी तरह सुदक्ष बनाए रखने के लिए अपव्यय करना अनिवार्य हो गया है क्योंकि आधुनिक महाजनी युग की समस्त राष्ट्रशक्तियाँ इनकी शत्रु है और उन्होंने अपने-अपने अस्त्रागार हथियारों से ठूंसठूंस कर भर रखे हैं। सोवियत रूस ने लीगऑवनेशन्स में अस्त्र निषेध का प्रस्ताव पेश करके कपटी शांति प्रेमियों को चमत्कृत कर दिया। शांति की जरूरत सबसे अधिक इनको है क्योंकि जनसाधारण के लिए शिक्षा-स्वास्थ्य अन्न की सुव्यवस्था करना इनका लक्ष्य है। ष्लीगऑवनेशन्स के सभी पहलवान गुंडागीरी का बहुत विस्तृत उद्योग किसी भी तरह बंद करना नहीं चाहते लेकिन शांति-शांति का हल्ला मचाते हैं। इसीलिए सभी साम्राज्यवादी देशों में अस्त्र-शस्त्रों के कंटकवन की खेती अन्न की खेती को दबाकर लहलहा रही है। इसी बीच रूस में कुछ समय तक भीषण अकालपड़ गया, जाने कितने लोग मरे। यह सारा धक्का बर्दाश्त करते हुए केवल आठ वर्षों से ये नए युग के निर्माण में लगे हुए हैं बाह्य उपकरण के अभाव के बावजूद।"

एक दिन शाम को गुरुदेव मास्को के एक किसान भवन में गए। कवि ने वहाँ किसानों से जो बातचीत की उससे इतने प्रभावित हुए कि लिखा, उस तरह की बातचीत जिस दिन अपने देश के किसानों के साथ होगी उसी दिन साइमन कमीशन का जवाब दे पाऊँगा। 1 अक्टूबर को उन्होंने प्रशांत चन्द्र महलानवीस के नाम अपने पत्र में किसानों से अपनी बातचीत का हवाला विस्तार से लिखा किसान भवन किसानों के क्लब जैसा है। रूस के सभी छोटे बड़े शहरों और गाँवों में इस प्रकार के आवास हैं जहाँ किसानों को कृषि विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि की शिक्षा दी जाती है, निरक्षरों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है, विशेष कक्षाओं में वैज्ञानिक तरीकों से खेती करने के बारे में बताया जाता है, उनमें प्राकृतिक सामाजिक विषयों के बारे में शिक्षण के लिए संग्रहालय भी हैं, किसानों को उपयोगी सुझाव सलाह देने की भी व्यवस्था की गई है। किसान किसी काम को शहर में आए तो किसान भवन में बहुत कम खर्च पर तीन सप्ताह तक ठहर सकते हैं। भवन में कवि ने देखा, कुछ

E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1 Vol -7 May 2024

रसोई घर में बैठकर खा रहे थे, कुछ लोग वाचनालय में अखबार पढ़ रहे थे। ऊपरी मंजिल पर बहुत से प्रदेशों के किसान जमा थे। पहले परिचय और स्वागत के रूप में भवन के परिदर्शक ने कुछ कहा, फिर कवि ने कुछ कहा, फिर प्रश्नोत्तर का सिलसिला चला।

एक किसान ने पूछा, भारत में हिंदुओं-मुसलमानों में झगड़े क्यों होते हैं? लगता है, 1920 का असहयोग आंदोलन वापस लेने के बाद भारत में जो हताशा पैदा हुई, और उस माहौल में सांप्रदायिक शक्तियों ने जो सिर उठाया और दंगे हुए उनके बारे में रूस के किसानों ने पढ़-सुन रखा था। कवि ने उत्तर दिया- मेरे बचपन में ऐसी बर्बरता न थी। सभी एक-दूसरे के दुःख-सुख में भाग लेते थे। जब से राष्ट्रीय आंदोलन शुरू हुआ है तभी से ऐसे कुत्सितकांड हो रहे हैं। इनका तात्कालिक कारण जो हो, मूल कारण है हमारे जनसाधारण के बीच मौजूद अशिक्षा हमारे देश में अब भी इतनी शिक्षा का प्रसार न हुआ जिससे इस प्रकार की दुर्बुद्धि दूर हो। तुम लोगों के देश में जो देखा उससे मैं विस्मित हुआ हूँ। किसानों ने पूछा-तुम तो लेखक हो, तुमने किसानों के बारे में कुछ लिखा है? भविष्य में उनकी क्या गति होगी? कवि ने कहा, मैंने लिखा ही नहीं, उनके लिए काम भी किया है। अकेले बूते जितना संभव है, उनको शिक्षा का कार्य करता हूँ, गाँवों की उन्नति में उनकी सहायता करता हूँ। लेकिन तुम्हारे यहाँ जो कम समय में इतना विराट शिक्षा आंदोलन चल पड़ा उसको तुलना में मेरी यह कोशिश अत्यंत साधारण है।

पिता जी से हमारी भेंट अक्सर नहीं हो पाती थी, अब ऐसा अलगाव नहीं होता। शिशु पाठशाला से मेरा बच्चा रोज घर आ जाता है, मेरी उससे रोज भेंट होती है। एक किसान महिला ने कहा- शिशुओं की देख-रेख और शिक्षा की स्वतंत्र व्यवस्था हो जाने से पति-पत्नी के बीच झगड़ा झंझट बहुत कम हो गया है। इसके अलावा, बच्चों के बारे में क्या-क्या दायित्व हैं-यह बात माँ-बाप अच्छी तरह सीख पाते हैं। एक काकेशीय युवती दुभाषिए से बोली- ष्कवि से कहो, हम काकेशीय गणतंत्र के लोग विशेष रूप से अनुभव कर रहे हैं कि अक्टूबर क्रांति के बाद से हम लोगों को सचमुच की स्वाधीनता और सुख प्राप्त हुआ है। हम नए युग की रचना में लगे हैं, इसका कठिन दायित्व हम अच्छी तरह समझते हैं, इसके लिए

चरम त्याग करने को हम राजी हैं। कवि को बताओ, सोवियत संघ की विभिन्न जातियों के जनगण उनके द्वारा भारतवासियों के प्रति अपनी आंतरिक सहानुभूति व्यक्त करना चाहते हैं। मैं कह सकती हूँ कि यदि संभव होता, हम लोग अपना घर-द्वार अपने बाल-बच्चे सबको छोड़कर उनके देशवासियों की सहायता करने जाते।''

गुरुदेव ने लक्ष्य किया कि यहाँ विविध जातियों के जनगण को कल-कारखाने का उपयोग करने की जो प्रेरणा, प्रोत्साहन और सुविधा प्राप्त हुई है उसका एकमात्र आधार है - यहाँ यंत्र का उपयोग व्यक्तिगत स्वतंत्र स्वार्थ के लिए नहीं किया जाता। यहाँ शिक्षा से समस्त जनता का उपकार हो रहा है, केवल धनी लोगों का नहीं। ''हम लोग अपने लोभ के लिए यंत्र को दोष देते हैं.... जिस प्रकार मास्टर मोशाय अपनी अक्षमता के लिए छात्र को बेन्च के ऊपर खड़ा रखते हैं।''

गुरुदेव ने अपनी इस बातचीत के अंत में लिखा, मास्को के कृषि सदन में जाकर अपनी आँखों देख आया कि दस वर्ष के भीतर रूस के किसान भारत के किसानों को बहुत पीछे छोड़ चुके हैं। इन्होंने केवल किताब पढ़कर नहीं सीखा है इनका मन बदल गया है, ये मनुष्य हो उठे हैं (ओरा मानुष हये उठेछे)। सोवियत ने कृषि विज्ञान में जो उन्नति की है, उसकी ख्याति यूरोप के वैज्ञानिकों तक पहुँच गई है। विश्वयुद्ध के पहले यहाँ बीज-शोधन का कोई प्रयास नहीं हुआ, आज लगभग तीन करोड़ मन संशोधित बीज इनके पास हैं। कृषि के बड़े-बड़े वैज्ञानिक जाँच केन्द्र अजरबेजान, उजबेकिस्तान, जार्जिया, उक्रेन आदि सीमांत प्रदेशों में भी स्थापित हुए हैं।

रूस के सुदूर प्रांतों तक के किसानों के जीवन में यह जो परिवर्तन, कृषि का यह जो द्रुत विकास सोवियत सरकार ने किया उसके पीछे सोवियत शिक्षा की बहुत बड़ी भूमिका रही है। गुरुदेव ने 2 अक्टूबर को बर्लिन से आशा अधिकारी के नाम अपने पत्र में लिखा कि ये लोग तीन चीजों को लेकर व्यस्त हैं - 1.कृषि, 2.शिक्षा और 3.यंत्र तीनों के द्वारा अन्न, मन और कर्मशक्ति को संपूर्णता देने की साधना कर रहे हैं। शिक्षा ने समूचे देश के जनगण का

मन बदल दिया है, जो मूक थे उन्हें भाषा दी है। शिक्षा ने मन का बल बढ़ाया, यंत्र ने कृषि का हलधर बलराम का मिथकीय संदर्भ लेकर कवि ने लिखा, हल कृषि का यंत्र बल है। यंत्र का बल पाकर दुर्बल राम (किसान) बलराम हो गए। सोवियत रूस में खेत की कृषि मन की कृषि के साथ आगे बढ़ रही है। ''मैं बराबर कहता आ रहा हूँ कि शिक्षा को जीवन यात्रा के साथ मिलाकर चलाना उचित है।'' कवि ने सोवियत शिक्षानीति में अपने ही शिक्षादर्शों को आकार लेते देखा।

कवि ने लक्ष्य किया कि इनकी शिक्षा केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए नहीं, विद्वान बनाने के लिए नहीं, मनुष्य बनाने के लिए है। हमारी शिक्षा ने चित्त को पोथी के भार से दबा दिया है, विद्यार्थी स्वयं कुछ सोच नहीं सकता। कवि ने शांति निकेतन का अनुभव बताया, मैंने छात्रों से कई बार बातचीत करने की कोशिश की लेकिन देखा कि उनके मन में कोई प्रश्न ही नहीं है। वे स्वयं कुछ जानना नहीं चाहते। उनके मन में ज्ञान की इच्छा और ज्ञान की उपलब्धि दोनों परस्पर विच्छिन्न है। संसार में इस प्रकार के मन जैसा निरुपाय मन और कहीं हो नहीं सकता। शान्ति निकेतन की पाठशाला जैसे पायनियर्स कम्यून या विद्यार्थी आश्रम स्थापित है, उनमें से एक आश्रम में जाकर कवि ने सोवियत शिक्षा का हाल अपनी आँखों देखा, बच्चों से बातचीत की। सीढ़ी के दोनों और बच्चे कतार बाँधकर स्वागत में खड़े थे। कमरे में पहुँचने पर वे सभी उनके चारों ओर सट कर बैठे, मानों मैं उन्हीं के बीच का हूँ (येनो आमि ओदेरइ आपन दलेर) ये सभी बिना माँ-बाप के, अनाथ बच्चे थे। ये सभी बेहद गरीब वर्ग के थे, सब ऐसे वर्ग के जो ष्नितांत नीच वृत्ति के द्वारा गुजर-बसर करते थे। उनके चेहरे की ओर कवि ने गौर से देखा-वे अनादर और असम्मान के कुहासे से ढ़के चेहरे बिलकुल न थे। उनमें न जड़ता थी, न संकोच था। सबके मन में एक प्रतिज्ञा थी, संकल्प था, सामने एक कर्मक्षेत्र था। मानो हमेशा तैयार हैं, किसी भी प्रकार की असावधानी नहीं, शिथिलता नहीं (जेनो सर्वदा तत्पर हये आछे, कोनो किछुते अनवधानेर शैथिल्य थकबार जो नेइ)।

स्वागत के उत्तर में कवि ने जो कुछ कहा था उसी के प्रसंग में एक बच्चे ने कहा, बुर्जुआ लोग अपना व्यक्तिगत मुनाफा खोजते हैं। हम चाहते हैं, देश के ऐश्वर्य में सभी का समान अधिकार हो। इस विद्यालय में हम इसी नीति के अनुसार चलते हैं। एक लड़की ने कहा- हम लोग अपनी व्यवस्था आप करते हैं। हम सभी मिलकर परामर्श करके काम करते हैं, जो सबके लिए श्रेयस्कर है, वही हमको स्वीकार्य है। एक और लड़के ने कहा- हमसे गलती हो सकती है लेकिन यदि इच्छा हो तो जो हमसे बड़े हैं उनसे सलाह-मशविरा करते हैं। जरूरत पड़ने पर छोटे बच्चे, बड़े बच्चों की राय लेते हैं और वे अपने शिक्षकों के पास भी जा सकते हैं। हमारे देश के शासनतंत्र का यही तरीका है। हम यहाँ उसी तरीके की चर्चा करते हैं। कवि ने लक्ष्य किया कि ये अपने व्यवहार को, चरित्र को एक बृहत् लोकयात्रा के अनुगत रखकर निर्माण कर रहे हैं। इस संबंध में उनका एक संकल्प है और इस संकल्प की रक्षा में ये गौरव अनुभव करते हैं। कवि ने शांति निकेतन के ब्रह्मचर्य आश्रम में भी चाहा था कि लोककल्याण और स्वायत्त शासन का जो दायित्व बोध हम में चाहते हैं वह पहले शांति निकेतन की छोटी सीमा में पूर्ण आकार ग्रहण करे। व्यक्तिगत हित को सार्वजनिक हित के अधीन रखने की बात राष्ट्रीय वक्तृता मंच पर खड़े होकर पूरी नहीं हो सकती, उसके लिए जमीन तैयार करनी होगी, हमारा आश्रम ही वह जमीन है।

कवि ने लक्ष्य किया कि उन्होंने सारी शक्ति केवल कागज में झाँक कर गँवारों की तरह ललित कला की उपेक्षा नहीं की। रंगशालाओं में श्रेष्ठ नाटकों और ऑपेरा के अभिनय में इतनी भीड़ उमड़ती है कि विलंब हो जाने पर टिकट पाना मुश्किल हो जाता है। दर्शक और श्रोता भी कैसे ? गरीब किसान और मजदूर। गुरुदेव जिस दिन नाटक देखने गए उस दिन तोल्स्तोंय के पुनरुत्थान का अभिनय था। ऐसी श्रेष्ठ रचना का अभिनय जन-साधारण ने मनोयोग से पूरी तरह निःशब्द रहकर सुना। कवि ने लिखा-ऐंग्लो-सेक्सन जाति के किसान मजदूर ऐसी रचना का पालन भर इतने शांत एकाग्र भाव से आनंद लें-यह बात सोची भी नहीं जा सकती हमारे देश की तो बात ही छोड़ो। मास्को में गुरुदेव के चित्रों की प्रदर्शनी लगी, उसे देखने को भारी भीड़ जुटी। कुछ ही दिनों में 5 हजार लोगों ने देखा। कवि ने लिखा- और कोई कुछ कहे, मैं तो इनकी रुचि की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता। रुचि की बात छोड़

भी दें तो केवल कौतूहल भी कम महत्व की बात नहीं है क्योंकि ष्कौतूहल रहना भी जाग्रत चित्त का परिचय है।ष् अपने देश के बच्चों में कौतूहल के नितांत अभाव की बात उठाकर कवि ने लिखा - जहाँ बुद्धि की जड़ता है वहीं कौतूहल दुर्बल होता है। 9 अक्टूबर को ब्रेमेन स्टीमर से अमरीका को जाते हुए सुरेन्द्र नाथ कर को उन्होंने लिखा, मॉस्को की त्रैतियाकोव गैलरी में एक साल में तीन लाख लोग चित्र देखने आए वही किसान और मजदूर। हमारे यहाँ जिस प्रकार जनपदीय अध्ययन की परिकल्पना बाद में वासुदेव शरण अग्रवाल ने की थी, सोवियत रूस में कुछ उसी प्रकार की रीजनल स्टडी के दो हजार केन्द्र खोले गए हैं जिनके 70 हजार सदस्य हैं। इनमें स्थानीय इतिहास, भूगोल, खनिज आदि से संबंधित तथ्यों की खोज की जाती है। संघर्ष और अभाव के बीच भी शिक्षा, संस्कृति और ललित कलाओं का यह विराट आयोजन उनकी दुर्बलता और पलायन का लक्षण नहीं है, यह उनकी शक्ति का प्रमाण है। कवि के शब्दों में ये जानते हैं कि जो रसज्ञ नहीं है, वे बर्बर हैं, जो बर्बर हैं वे बाहर से रुक्ष, भीतर से दुर्बल हैं। ये दुर्दिन और दुर्भिक्ष में भी नाच रहे हैं। गा रहे हैं, नाटक कर रहे हैं, इनके कला प्रेम और देश प्रेम के बीच विरोध नहीं है, इनकी रसज्ञता और कर्मठता में विरोध नहीं है। कवि ने प्राचीन भारत के सांस्कृतिक गौरव की याद करते हुए लिखा-विक्रमादित्य ने शकों को भगा दिया था लेकिन कालिदास को मेघदूत लिखने से नहीं रोका था। कवि ने मन ही मन अपना संकल्प दुहराया-पुलिस की लाठी-धारा की श्रावण-वृष्टि में भी मेरा नृत्य-गान बंद नहीं होगा।

5 अक्टूबर को गुरुदेव ने ब्रेमेन जहाज से नंदलालबसु को सोवियत रूस में कला सामग्री की रक्षा, संग्रह और संग्रहालयों की स्थापना के बारे में विस्तार से लिखा। जब क्रांति के समय मारकाट, लूटपाट चल रही थी तभी यहाँ क्रांतिकारी नेताओं ने सख्त हिदायतदी-कला सामग्री नष्ट न होने पाए। छात्र और अध्यापक धनी लोगों के परित्यक्त महलों से कला सामग्री ला लाकर संग्रहालयों में जमा करने लगे। पीकिंग के बसंत प्रासाद में ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने अमूल्य कला-संपदा का नाश किया था। इन्होंने धनी लोगों को उनके व्यक्तिगत धन से वंचित किया लेकिन जिस कला सामग्री पर समस्त मानव जाति का अधिकार था उसे बर्बर लोगों की तरह नष्ट नहीं किया। सोवियत सरकार ने किसानों के लिए

केवल खेती और अनाज का ही नहीं, ज्ञान और आनंद की भी व्यवस्था की। उन्हें मनुष्यत्व प्रदान किया। मंदिरों में पूजा पात्र आदि छोड़कर शेष सामग्री लाकर संग्रहालयों में सुरक्षित कर दी। जनसाधारण की हस्तकला, शिल्प सामग्री, लोकसाहित्य, लोकसंगीत आदि के संग्रह और संरक्षण की व्यवस्था की। संग्रहालयों के द्वारा जनसाधारण को विज्ञान, साहित्य, संगीत, चित्रकला आदि की शिक्षा दी जा रही है। संग्रहालय लोकशिक्षा के माध्यम हो गए।

9 अक्टूबर को कालीमोहन घोष के नाम अपने पत्र में उन्होंने मास्को पार्क एजूकेशन ऐंडरिक्रिएशन का विस्तृत विवरण दिया। यह पार्क जनसाधारण का आरामबाग है जिसके बीचोंबीच एक मंडप में प्रदर्शनी के जरिए शहरों और गावों में सोवियत सरकार द्वारा कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र में किए जाने वाले नए-नए कार्यों की नवीनतम सूचनाएँ पाई जा सकती है, तरह-तरह के मॉडल, पुराने और नए गाँवों के यंत्रों के, फलों-फूलों के उत्पादन के, बागवानी के नमूने प्रदर्शित हैं। पार्क में एक जगह केवल छोटे बच्चों के लिए है जिसमें वयस्क लोगों का प्रवेशनिषेध है। यहाँ बच्चों के तरह-तरह के खेल, खिलौने और थिएटर हैं जिनमें अभिनेता और संचालक सब कुछ बच्चे रहते हैं। शिशुरक्षणी (क्रेच) कुछ दूरी पर है। एक दोतल्लेमंडप में नीचे क्लब है, ऊपर पुस्तकालय। कहीं शतरंज का खेल, कहीं मानचित्र, कहीं दीवार पर टंगे अखबारय कोआपरेटिव की दुकानें भी हैं जिनमें शराब बेचना मना है। मास्को पशुपालन विभाग की भी दुकान है जहाँ मछली, पक्षी और पौधे खरीदे जा सकते हैं। अन्य प्रदेशों में भी इस तरह के पार्क खोलने का प्रस्ताव है। विवरण के बाद गुरुदेव की टिप्पणी ध्यान देने योग्य है-इसमें विचार करने लायक बात यह है कि जनसाधारण को ये भद्र साधारण का उच्छिष्ट मानुष नहीं बनाना चाहते। जनसाधारण को छोड़कर यहाँ कुछ नहीं। ये समाज ग्रंथ के परिशिष्ट नहीं हैं, सभी अध्यायों में यही है।

सोवियत आयोजन में जनसाधारण का गौरव देखकर वे जितना ही आनंद और विस्मय से अभिभूत हुए। पराधीन भारत में अपनी जनता की अवज्ञा, उत्पीड़न, अपमान और कष्ट की बात सोच-सोच कर उतना ही बेचौन भी हुए। सोवियत रूस के समाजवादी कार्यों की उन्होंने जो भूरि-भूरि प्रशंसा की उसमें उनके विश्व मानवतावाद से अधिक उनका

देशानुरागबोल रहा है। उन्होंने सोवियत एकनायकत्व (डिक्टेटरशिप) की आलोचना भी की. ये भूल जाते हैं कि व्यष्टि को दुर्बल करके समष्टि को सबल नहीं किया जा सकता, व्यष्टि यदि बेड़ियों में जकड़ी हो तो समष्टि स्वाधीन नहीं हो सकती इस प्रकार एक के हाथों दस का संचालनसंयोगवश कुछ दिन के लिए फलदायी हो भी सकता है लेकिन हमेशा के लिए कभी नहीं। (कालीमोहन घोष के नाम पत्र)। उन्होंने यह भी लक्षित किया कि यद्यपि सोवियत मूल नीति को लेकर ये लोग व्यक्तिगत स्वाधीनता को निर्दय भाव से दबाने में संकोच नहीं करते तथापि सामान्य रूप से शिक्षा के द्वारा, चर्चा के द्वारा व्यक्ति की आत्मनिहित शक्ति को बढ़ाते ही जा रहे हैं-फासिस्टों की तरह उसको बिलकुल पीस नहीं डालते। शिक्षा को भी अपने मत का अनुवर्ती बनाने पर जोर है लेकिन जन साधारण की बौद्धिक चर्चा को बंद नहीं किया है। सोवियत नीति के प्रचारों में मुक्ति के ऊपर बाहुबल को वरीयता दी है लेकिन मुक्ति को पूरी तरह छोड़ा नहीं और जनसाधारण के मन को धार्मिकमूढ़ता और सामाजिक प्रथाओं की अंधता से मुक्त रखने की प्रबल चेष्टा कर रहे हैं। ये मनुष्य को दैहिक दृष्टि से निपीड़ित कर रहे हैं, मानसिक दृष्टि से नहीं (वही)। गुरुदेव को मनुष्य पर मनुष्य की स्वाधीनता-प्रिय प्रकृक्ति पर बड़ा भरोसा है। उनका विश्वास है कि मन को एक ओर स्वाधीन करके दूसरी ओर जुल्म से वश में करना सहज नहीं है। भय का प्रभाव कुछ दिन तक काम करेगा, लेकिन उस भीरुता को धिक्कारते हुए शिक्षित मन एक दिन अपनी वैचारिक स्वतंत्रता के अधिकार का जोरदार दावा पेश करेगा। (वही) रामानंद चट्टोपाध्याय के नाम लिखित सोवियत नीति वाले पत्र में उन्होंने पराधीन भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति के मूल में मौजूद जिस प्रचंड लोभ की विस्तृत चर्चा की है उसी लोभ रूपी असुर को रूस में दम तोड़ते देखकर अपना उच्छ्वसित आनंद भी प्रकट किया है - श्रूस में जब मैंने लोभ का तिरस्कार देखा, मुझे इतना अधिक आनंद हुआ जितना शायद किसी अन्य देश के निवासी को नहीं होता। (रामानंद चट्टोपाध्याय के नाम दूसरा पत्र) इस पत्र में भी उन्होंने एकनायकत्व की आलोचना की है-एकनायकत्व से बाहर सफलता मिल सकती है दो चार फसलें अच्छी हो सकती हैं लेकिन अंदर ही अंदर जड़ें कट जाती हैं.. एकनायकत्व जहाँ भी हो-शास्त्र में, गुरु में या राष्ट्रनेता में, उससे मनुष्यत्व की हानि होती है। (वही) सोवियत नीति में बल प्रयोग का पक्ष नकारात्मक पक्ष है, उसके विरुद्ध गुरुदेव ने जो सकारात्मक पक्ष देखा है वह है शिक्षा

जो जबरदस्ती के बिलकुल विपरीत है। (वही) गुरुदेव की भविष्य दृष्टि की विशालता इस बात में है कि उन्होंने केवल सोवियत तानाशाही की ही आलोचना करके छुट्टी नहीं पा ली। उन्होंने इस सत्य को रेखांकित किया कि जहाँ भी जनमानस में अज्ञान और धार्मिक मूढ़ता के संस्कार सदियों से जमे हुए हैं वहाँ तानाशाही की संभावना हमेशा बनी रहती है। उन्होंने भारत के लिए लिखा - आज सब महात्मागांधी का निर्देशनमान रहे हैं। कल जब वे नहीं रहेंगे तब नेतृत्व का दावा करने वाले बहुत से अचानक दिखाई पड़ेंगे। (वहीं) आजादी के सत्तर साल बाद भी देश में फासिज्म का खतरा बरकरार है क्योंकि विकल्प के अभाव में लोग किसी न किसी नायक के पीछे आँख मूँद कर चलने को तैयार हैं।

गुरुदेव की एक और गंभीर चिंता अपने देश में गाँवों की नियति को लेकर थी। उन्होंने देखा कि देश में रहते हुए भी गाँव निर्वासित से लगते हैं। उनकी इच्छा थी कि गाँवों की रक्षा हो, गाँव शहर की जूठन पर न पलें, स्वावलंबी हो। गाँव और शहर का फर्क उन्होंने यूरोप में भी देखा था। लेकिन रूस में उन्होंने देखा कि गाँव और नगर के विरोध को मिटाने का प्रयत्न किया जा रहा है। यदि यह प्रयास सफल हो तो नगर की अस्वाभाविक अतिवृद्धि का निवारण होगा। देश की प्राणशक्ति और चिंतन शक्ति सर्वत्र व्याप्त होकर अपना काम कर सकेगी। (वही) गुरुदेवगाँवों को बचाना चाहते थे लेकिन उसकी ग्राम्यता को नहीं। वह यह नहीं चाहते थे कि गाँव विद्या-बुद्धि, संस्कार, विश्वास और कर्म में गाँव की सीमा में ही बंद रहे, बाहर की दुनिया से कटा रहे। वर्तमान युग की प्रगति से जुड़कर आधुनिक विद्या और बुद्धि के प्रकाश में गाँव की उन्नति उन्हें काम्य थी। इसी तरह के कई स्वप्न थे जिन्हें गुरुदेव ने सोवियत रूस में आकार लेते देखा था। 24 सितंम्बर, 1930 के अपने विदाई भाषण में उन्होंने कहा था- जो थोड़ा बहुत मैंने देखा है उसी ने यहाँ की अभूतपूर्व क्रांति और जादुई सफलता के प्रति मुझे आश्वस्त कर दिया है और मैं उस दिन का स्वप्न देखता हूँ जब यह सब कुछ आर्य सभ्यता की उस प्राचीनभूमि भी संभव होगा, जब जनसाधारण के लिए शिक्षा का महान वरदान और समान अवसर सुलभ होगा। मैं आभारी हूँ आप सबके प्रति जिन्होंने उस सपने को ठोस रूप में देखने में मेरी मदद की है जो सपना मेरे मन में लंबे समय से पल रहा था, यह सपना था युगों से श्रृंखलाओं में जकड़ेजन-मन को बंधन मुक्त करने का।

E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1 Vol -7 May 2024

इसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ (लेटर्स फ्रॉमरशिया, शांति निकेतन) ये केवल औपचारिक धन्यवाद के शब्द नहीं हैं। ये राष्ट्रीय नवजागरण के मंत्रद्रष्टा कवि के हृदय से निकले शब्द हैं।

उन्होंने अमिय चक्रवर्ती के नाम एक पत्र में लिखा कि श्रूस की प्रगति ने मुझे उत्साह दिया, मैं आशावादी हो गया। मानव इतिहास में मुझे कहीं पवित्र उल्लास और आशा का ऐसा स्थायी आधार नहीं दिखायी दिया। रूस ने जिस क्रांति की नींव पर नवयुग का निर्माण आरंभ किया है वह क्रांति मनुष्य के क्रूरतम और प्रबलतम मनोवृत्ति (इम्पल्स) के विरुद्ध है। नया रूस मानव सभ्यता के कंकाल से एक मृत्यु कील निकालने में व्यस्त है जिसे लोभ कहा जाता है। मेरे अंतर से यह प्रार्थना फूटती है कि उनका प्रयत्न सफल हो। (गुरुदेव टैगोर, हीरेन मुखर्जी, पृ. 124) अपने जीवन के अस्सी वर्ष पूरे होने पर उन्होंने सभ्यता का संकट शीर्षक निबंध में रूस की आँखों देखी प्रगति का विस्तार से उल्लेख करते हुए लिखा कि शिक्षा विस्तार और आरोग्य साधन के क्षेत्रों में सरकार के अध्यवसाय के फलस्वरूप ''उस विशाल साम्राज्य की सीमाओं से मूढ़ता, दैन्य और अवमानना निर्वासित है। रूस की आश्चर्यजनक परिणति को देखकर मैंने एक ही समय ईर्ष्या और आनंद का अनुभव किया है।'' रूसी शासन व्यवस्था की एक और विशेषता ने उनके हृदय को विशेष रूप से स्पर्श किया, वह है, सोवियत रूस के साथ रेगिस्तान के मुसलमानों की बहुसंख्यक जातियों का राष्ट्रीय जीवन में संबंध जुड़ा है। (प्रतिनिधि निबंध, गुरुदेव ठाकुर, सस्ता साहित्य मंडल, 2011 पृ. 337) ध्यान देने की बात है कि गुरुदेव ने रूस के बारे में जब यह सब लिखा तब वहाँ स्तालिन का शासन था। उनके घनिष्ठ मित्र और प्रख्यात वैज्ञानिक महलानवीस ने अपने संस्मरण में बताया है कि गुरुदेव अपनी मृत्यु शय्या पर भी नाजी-सोवियत मोर्चे पर हो रहे संघर्ष का समाचार पूछते रहते थे और कहा करते थे कि केवल सोवियत हैं जो इस दैत्य को पराजित कर सकते हैं और करेंगे। (गुरुदेव टैगोर, हीरेन मुखर्जी, पृ. 125)

सोवियत संघ ने बाहरी दैत्यों को तो पराजित कर दिया लेकिन भीतरी अन्तर्विरोध का समाधान वह नहीं कर पाया और 1992 में उसका ध्वंस हो गया। सर्वहारा की तानाशाही तो चली गई लेकिन उसके स्थानापन्न पूँजीवादी लोकतंत्र में पूर्ववर्ती सभी गणतंत्रों का आज बुरा

हाल है। गुरुदेव के पत्रों में व्यक्त उनकी भावना से ही अनुमान किया जा सकता है कि उस दौर में हमारे देश को सोवियत संघ से कितनी प्रेरणा मिली होगी, कितना उत्साह और आवेग प्राप्त हुआ होगा। आज हमारे देश में कॉरपोरेट पूंजी का वर्चस्व है, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए सभी द्वार खोल दिये गए हैं। जल, जमीन, जंगल, पहाड़, नदियाँ, झीलें, वनस्पति, जीवजन्तु, आदिवासी और जनसाधारण सभी पूँजी के घायल शिकार हैं। हृदय बुद्धि और विवेक पर सख्त पहरा है। धर्म की मूढ़ता, विचार की संकीर्णता, आचरण की असहिष्णुता बढ़ाव पर है। भले लोगों की दुर्दशा है, स्त्रियों की दुर्गति है, अल्पसंख्यकों का जीनादूभर है। सीदत साधु साधुता सोचति, खलहुलसत, बिलसति खलई है। ऐसे में गुरुदेव की रूस की चिट्ठी पढ़ना सिकुड़े हुए फेफड़ों को प्रातः काल की शुद्ध प्राणवायु से भरने जैसा है, चिट्ठी दर चिट्ठी नई-नई शक्ति के, नई-नई स्फूर्ति के नए-नए सपनों, विचारों और आदर्शों के हरे-भरे उद्यानों की सैर करने जैसा है।

संन्दर्भ सूची

1. Rabindranath Tagore himself a true poem by Hiren Mukerjee PPH Third edition March 2010 page 118&119 में उद्धृत
2. मॉडर्न रिव्यू (जुलाई 1918)
3. उत्तर प्रदेश ज़ब्तशुदा साहित्य विशेषांक (293)
4. गुरुदेव टैगोर, हीरेन मुखर्जी, पृ. 124
5. गुरुदेव टैगोर, हीरेन मुखर्जी, पृ. 125
6. प्रतिनिधि निबंध, गुरुदेव ठाकुर, सस्ता साहित्य मंडल, 2011 पृ. 337